नोबेल पुरस्कार की अन्दरूनी कहानी

11.11.1995 रांची एक्सप्रेस

शशिधर खां

१९९५ के नोबेल पुरस्कारों की घोषणा हो चुकी है। आम तौर पर समझा जाता है कि नोबेल पुरस्कार पाने वाला व्यक्ति अवश्य ही कोई विशिष्ट प्रतिभा वाला होगा। क्योंकि ऐसी धारणा बन गयी है कि विश्व में अत्यन्त आदर और प्रतिष्ठा की दृष्टि से देखा जाने वाला यह पुरस्कार विश्व साहित्य की श्रेष्ठतम कृतियों को दिया जाता है।

संसार की उत्कृष्ट रचनाओं के अध्येता कमोवेश इस बात से अवगत है कि कई महान साहित्यकार ऐसे हुए हैं, जो अपनी लेखनी की बदौलत जन-जन के चितेरे बन गए, लेकिन नोबेल अकादमी के पोंगापंथी दृष्टिकोण में उनका सही मूल्यांकन नहीं हो पाया। साहित्य पढ़ने-जानेवालों को इस बात की जानकारी है कि अपने लेखन कौशल के चमत्कार से विश्व जनमानस पर छा जाने वाली तीन अति विशिष्ट विभूतियों को नोबेल पुरस्कार से वंचित कर दिया गया था। मगर उसके पीछे जो दकियानूसी विचारधारा काम कर रही थी, उसका विस्तृत विवरण पहली बार प्रकाश में आया है। और इसका श्रेय भी नोबेल अकादमी के ही एक सदस्य को जाता है।

इस बेइंसाफी का शिकार होने वाले साहित्याकाश के ये तीनों जाज्वल्यमान नक्षत्र हैं- लेव तोल्सतोय, टॉमस हार्डी और ग्राहम ग्रीन। लिखने-पढ़ने वाला शायद ही कोई व्यक्ति हो, जिसने इन तीनों का नाम न सुना हो। इनका नाम निर्णायकों ने प्रस्तावित करने के बाद अन्य व्यक्तियों को पुरस्कार दिए जाने की घोषणा कर दी।

लेव तोल्सतोय की जगह थियोडोर भाम्मसेन को, टामस हार्डी की जगह पाल हेईस को और ग्राहमग्रीन की जगह मिगुएल एंजेल आस्यूरियस को नोबेल पुरस्कार क्यों दिया गया। यह सवाल उठाया है नोबेल अकादमी के एक पूर्व सदस्य जेल एस्पमार्क ने अपनी हाल में छपी पुस्तक 'नोबेल पुरस्कार के पीछे सिद्धान्त व मान्यताएं' में और इसके जवाब में उन्होंने जो तथ्य उजागर किए हैं उसे जानने के बाद व्यक्ति इस पुरस्कार के बारे में अब तक प्राप्त जानकारी पर पुनर्विचार करने को मजबूर हो जाता है। उन्होंने जो ब्योरा दिया है उसके बारे में संसार के बुद्धिजीवियों को पहले से बहुत कम जानकारी थी।

जेल एस्पमार्क का कहना है कि नोबेल अकादमी का इतिहास इसके अध्यक्ष तथा निर्णायक समिति के सदस्यों की अस्पष्ट आकांक्षाओं को थोपने की साजिशों से भरा है। उनके अनुसार तत्कालीन राजनीतिक, सामाजिक वातावरण के हिसाब से निर्णायकों के विचार बदलते रहे और इसका प्रभाव विश्व की एकमात्र सबसे बड़ी सम्मानित संस्था पर पड़े बिना न रह सका। जिन पुस्तकों की विषयवस्तु उनकी मानसिकता से मेल नहीं खायी, उनकी बिल्कुल उपेक्षा कर दी गयी।

एस्पमार्क स्वयं कवि, प्रखर आलोचक और साहित्यिक इतिहासवेत्ता है साथ-साथ नोबेल अकादमी के सदस्य भी रह चुके है, इसलिए उन्हें इस सम्बन्ध में काफी नजदीक से जानने-समझने का मौका मिला है। उन्होंने कुछ चौकाने वाले चित्र उपस्थित किए है।

रूढ़िवाद से आकंठ ग्रस्त इन निर्णायकों ने नोबेल पुरस्कार के संस्थापक और डायनामाईट के आविष्कर्ता आल्फ्रेड नोबेल की मूल भावनाओं की पूरी तरह अवहेलना कर दी। आल्फ्रेड नोबेल ने अपने वसीयतनामे मे लिखा था कि सही अर्थों में सर्वोत्कृष्ट कृतियों को इस पुरस्कार से सम्मानित किया जाए।

५८ वर्षों के बाद अकादमी का रिकार्ड जनसुलभ हो पाया है। इसलिए अब किसी भी जिज्ञासु के लिए यह जानना संभव हो गया है कि जिन हालातों में अमुक व्यक्ति को पुरस्कार के लिए चुना गया और किन कारणों से किन्हीं का नाम निर्णायकों ने पुरस्कार की अंतिम सूची से निकाल दिया। रिकार्ड से पता चलता है कि निर्णायकों की नजर में टॉमस हार्डी के उपन्यासों की नायिकाओं में धार्मिक व नैतिक आदर्शों की कमी पायी गई और उसी वजह से हार्डी की जगह जर्मनी के लेखक पाल हेईस का नाम अंतिम सूची में शामिल किया गया। हेईस का नाम जर्मनी में भी लोग नहीं जानते थे।

फ्रांसीसी उपन्यासकार एलिम जोला को उनके विक्षिप्तता के स्तर तक प्रकृतिवादी रूझान वाला होने के कारण पुरस्कार से वंचित कर दिया गया और उनकी जगह नार्वे के नाटककार को अपने नकारवाद के चलते पुरस्कार के योग्य समझा गया।

स्वीडन के महान लेखक आगस्ट स्टिंदबर्ग सारी जिन्दगी अपने देश की राजनीतिक सामाजिक व्यवस्थाओं के खिलाफ लिखते रहे और उनके नाम पर कभी विचार तक नहीं किया गया। संसार के सर्वश्रेष्ठ चिंतक बर्टेड रसेल का नाम भी अकादमी में विचार योग्य नहीं माना गया।

आरम्भ के अधिकांश विजेताओं के नाम और शोहरत की दुनिया तो इतनी संकीर्ण थी कि साहित्यिक इतिहासकारों ने उनके नाम का कहीं जिक्र तक नहीं किया है। ऐसे रचनाकारों में से कुछ है- सली प्रधोम्मे, मॉरित मेटर्लिक और हेनरी प्रोटोप्पिडन। एस्पमार्क ने इसे अकादमी का दुर्भाग्य कहा है। उनके अनुसार जो संस्था नए विचारों का क्षेत्रीय स्तर पर विरोध करने का एक महत्वपूर्ण मंच बन गई हो, वही इतने सम्मानजनक अन्तरराष्ट्रीय साहित्य पुरस्कार का नीति-निर्धारण करती है यह खेद का विषय है।

१९२० रूढ़िवादी सदस्यों के विरुद्ध अभियान शुरू हुआ और प्रगतिशील विचारों को नयी पीढ़ी के व्यक्तियों ने निर्णायकों की जगह ली। नए निर्णायक मण्डल ने आल्फ्रेड नोबेल की दिल्ली इच्छा को भी उदारवादी पुट दे दिया। उन पर पूर्वाग्रह से ग्रसित लोग हावी नहीं हो पाए। जार्ज बर्नार्ड शा और डब्ल्यू. बी. यीट्स को पुरस्कार मिलना उसी का परिणाम था जिनके नाम पहले के निर्णायक मंडल ने अस्वीकृत कर दिए थे।

संस्था को और अधिक लोकप्रिय तथा उदार बनाने के लिए जॉन गाल्सवर्दी और पर्ल एस. बक को पुरस्कार दिए गए तथा 'गॉन विद द विंड' के लेखक मारग्रेट मिशेल का नाम भी सूची में शामिल किया गया।

दूसरे विश्वयुद्ध की समाप्ति से पहले तक हर्मन हेस्से, एंद्रे गिड, टी.एस. इलियट और विलियम फॉकनर के नामों पर विचार भी नहीं किया गया, १९४६-४९ की अवधि में सर्वत्र इन्हीं की चर्चा थी।

युद्ध के बाद के वर्षों की उपलब्धियां नोबेल अकादमी की अनमोल धरोहर हैं। इन वर्षों को अकादमी का स्वर्णिमकाल माना गया है। इस समय एक ओर जहां साहित्य जगत के युगान्तरकारी पुरोमानियों-अर्नेस्ट हेमिंग्वे, अल्बर्ट कामू और सैमुएल बेकर को पुरस्कार पाने वालों में शामिल किया गया, वहीं दूसरी ओर बर्टेड रसेल, विंस्टन चर्चिल और ज्यांपाल सार्त्र को पुरस्कार देकर अकादमी ने अपनी प्रतिष्ठा कई गुनी बढ़ा ली।

जानकारी

अकादमी के अन्दर नयी पीढ़ी आई तो, पर इसके आने में काफी देर हो चुकी थी, क्योंकि तब तक जेम्स आएल, फ्रैंज काफका, डी.एच. लारेन्स और मार्सेल प्राउस्ट हरीखे अद्वितीय महारथियों ने अपनी अंतिम यात्रा पूरी कर ली थी।

युद्ध के बाद के वर्षों की उपलब्धियां नोबेल अकादमी की अनमोल धरोहर हैं। इन वर्षों को अकादमी का स्वर्णिमकाल माना गया है। इस समय एक ओर जहां साहित्य जगत के युगान्तरकारी पुरोमानियों-अर्नेस्ट हेमिंग्वे, अल्बर्ट कामू और सैमुएल बेकर को पुरस्कार पाने वालों में शामिल किया गया, वहीं दूसरी ओर बर्टेड रसेल, विंस्टन चर्चिल और ज्यांपाल सार्त्र को पुरस्कार देकर अकादमी ने अपनी प्रतिष्ठा कई गुनी बढ़ा ली।

१९७० के दशक में अकादमी पर पुन: असंगत तत्वों का बोलबाला हो गया। नए सदस्यों की नयी नीति के अनुसार साहित्य समाज में हलचल मचानेवालों को पुरस्कार देने का विचार त्याग दिया गया और राजनेताओं, भाषाओं, शैलियों और संस्कृतियों को सम्मानित किया जाने लगा। अकादमी के एक प्रभावशाली सदस्य आर्थर लुंकविस्ट ने काफी जोर देकर कहा कि पुरस्कार का मुख्य उद्देश्य उन प्रतिभाओं का सम्मान करना है जिन्हें अपेक्षित मान्यता नहीं मिला है। निर्णायक मण्डल का वही एकमात्र सदस्य था जिसने १९६७ में पाश्चात्य उपन्यास जगत में अपनी रचनाओं से सबसे लोकप्रिय माने जाने वाले लेखक ग्राहम ग्रीन के नाम का अंत तक विरोध किया। उस वर्ष का पुरस्कार ग्राहम ग्रीन की जगह ग्वाटेमाला के मिगुएल एंजेल आस्यूरियस को दिया गया।

तत्पश्चात् निर्णायकों की नीति शैली में पुन: थोड़ा सा बदलाव आया। १९७३ में आस्ट्रेलिया के पैट्रिक ह्वाईट और १९८६ में नाइजीरिया के बोल सोइंका को पुरस्कार मिलने के बाद यह यह बात स्पष्ट रूप से सामने आ गई। लेकिन १९०२ में लेव तोल्सतोय के स्थान पर एक फिसड्डी इतिहासकार को नोबेल पुरस्कार से सम्मानित कर तत्कालीन चयन समिति ने जो काला धब्बा लगा दिया, वो अकादमी के माथे पर से कभी नहीं मिट पाएगा। तोल्सतोय जैसे कालजयी रचनाकार को नीचा दिखाकर पुरस्कार लेने वाले जर्मन रचनाकार थियोडोर माम्मसोन ने रोम के इतिहास पर एक पुस्तक लिखी थी और उसी के आधार पर घुन लगे मस्तिष्क वाले उस समय के निर्णायकों ने उन्हें जीवित इतिहासकारों में सबसे महान बताकर उनका नाम प्रस्तावित कर दिया। संसार भर में अकादमी की बड़ी फजीहत हुई और हाल के वर्षों में भी कुछ प्रस्तावित नामों को लेकर अकादमी की कटु आलोचना होती रही है।

अकादमी के सदस्य पुरस्कार की अंतिम सूची काफी गोपनीय रखते हैं, ताकि मनमाने ढंग से नामों का चयन कर संसार के बौद्धिक मंच पर अपनी इच्छा थोपी जा सके। प्राय: ऐसा होता है कि अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर चर्चित नाम जहां के तहां रह जाते हैं और किसी अजनबी को पुरस्कार देकर लोगों को चौका दिया जाता है। इस बार भी कुछ इसी से मिलती-जुलती बात सामने आई है। १९९५ के साहित्य के लिए नोबेल पुरस्कार विजेता सीमस हेनी के नाम की कहीं कोई चर्चा नहीं थी। ५६ वर्षीय सीमस हेनी आयरिश कवि हैं और उत्तरी आयरलैंड की आजादी के लिए ब्रिटिश सरकार के खिलाफ कई वर्षों से संघर्षरत आई.आर.ए. (आईरिश रिपब्लिकन आर्मी) से जुड़े रहे हैं। पुरस्कार की सूचना पाने के बाद उन्होंने सिर्फ इतना कहा- 'जब मैं लिखता हूं तो लगता है एक किस्म का अपराध कर रहा हूं।'

चाहे जो भी टीका-टिप्पणियां होती रही हों, पर इतना निर्विवाद सत्य है कि नोबेल अकादमी विश्व की एकमात्र संस्था है जहां से सम्मानित होने के बाद कोई भी रातोंरात विश्व-व्यक्तित्व बन जाता है। इसलिए अकादमी के एक पूर्व निदेशक बैरन रामेल को यह उक्ति सर्वथा सत्य है कि 'नोबेल पुरस्कार बौद्धिकों का आलंपिक स्वर्णपदक है।'